International Journal of Sanskrit Research 2015; 1(4): 90-95

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2015; 1(4): 90-95
© 2015 IJSR
www.sanskritjournal.com
Received: 18-04-2015
Accepted: 21-05-2015

कुसुम मौर्या
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली–110007

Correspondence
कुसुम मौर्या
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली–110007

भारतीय सिधान्त ज्योतिष शास्त्रा में काल तत्त्व का स्वरूप

कुसुम मौर्या

प)चां त्वं पोषौमास्ते पुपुष्वान् गौयत्रां त्वो गायति शक्वौरीषु।
ब्रह्मा त्वो वदौति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रााां विमिौमीत उ त्वः।।[1]

तथा

पद्वे विद्ये वेदितव्ये–परा चैवापरा च। तत्रााापरा)ग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदो{थर्ववेदाः शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषामिति! अथा परा यया तदक्षरमधिगम्यते।[2]

)षियों की क्रांतदृष्टि से प्राप्त ये उपर्युक्त मंत्रा सम्पूर्ण ज्ञान विज्ञान के आदि स्रोत है। भारतीय सिधान्त ज्योतिष शास्त्रा के मूलबीज भी इन्हीं संस्कृत साहित्य में सर्वत्रा बिखरे हुए है। भारतीय सिधान्त ज्योतिष शास्त्रा के अन्तर्गत ज्योतिष पिण्डों की सूक्ष्मातिसूक्ष्म गणना के उपरान्त ही ग्रहगणित सिधान्तों को शुध रूप में सूत्राबध किया जाता था, जिससे उचित फ्काल मानय् की प्राप्ति की जा सके।

ज्योतिष शब्द की व्युत्पत्ति– √द्युत इसुन प्रत्यय से 'ज्योतिस्' शब्द बनता है– ''ज्योतिः अस्ति अस्य 'ज्योतिस्' तथा ज्योतिस् + अच् द्वारा 'ज्योतिष' शब्द की उत्पत्ति होती है। इस शब्द का तात्पर्य यह है कि– 'ज्योतिष' वह पदार्थ है जिसमें ज्योति या प्रकाश विद्यमान हो।[3] ब्रह्माण्ड में प्रदीप्त समस्त पिण्ड 'ज्योतिष पिण्ड' कहलाते हैं। यथा– ग्रह, उपग्रह, नक्षत्रा, धूमकेतू, उल्का पिण्ड आदि 'ज्योतिष तत्त्व' हैं। संस्कृत साहित्य में ज्योतिष तथा ज्यौतिष इन दोनों ही शब्दों का प्रयोग मिलता है। 'ज्योतिः अधिकृत्यं कृतं शास्त्रां ज्योतिषं शास्त्राम्' इस अर्थ में अण् प्रत्यय होकर 'ज्यौतिष'' बनेगा, तथा 'ज्योतिः अस्ति अस्मिन्पदार्थे' 'अर्शादिभ्यो अच्' इस सूत्रा से 'ज्योतिष' शब्द निष्पन्न होता है। इस प्रकार दोनों ही शब्दों का पर्याय है– **सूर्यादि नवग्रह, अश्विन्यादि 27 अथवा 28 नक्षत्रों का बोध् कराने वाला शास्त्रा 'ज्योतिष अथवा ज्योतिष शास्त्रा' कहलाता है।**[4]

भारतीय ज्योतिषाचार्यों के द्वारा ज्योतिष शास्त्रा के सर्वप्रथम तीन भेद बताए गए थे।[5] तदुपरान्त कालक्रम के प्रवाह में इसके पुनः पांच भेद ज्योतिषाचार्यों ने कहे हैं।[6] इसमें 'सिधान्तस्कन्ध अन्य स्कन्धें का 'मूलबीज' है, क्योंकि संहिता ग्रंथों में जिस मुहुर्त अर्थात् शुभकाल का वर्णन प्राप्त होता है वह सिधान्त ज्योतिष की गणना का ही परिणाम है। वैदिक ट्टचाओं में शुभाशुभ काल ज्ञान हेतु नक्षत्रादर्श के समीप जाने को कहा गया है। 2 होता, अध्वर्यु, ट्टत्विक इत्यादि आचार्य यज्ञानुष्ठान के लिए 'उचित काल' को जानकर समय–समय पर यज्ञादि कार्य संपन्न करते थे, ज्योतिष आकाश का निरीक्षण करके काल की गणना करते थे। संभवतः ज्योतिषाचार्यों ने काल को लोकव्यवहारोपयोगी बनाने हेतु ही 'नवविध् कालमान' की स्थापना की होगी। काल की गणना करना ज्योतिषाचार्यों का प्रमुख कार्य था। गणना के उपरान्त जिन सिधान्तों की स्थापना ज्योतिषाचार्यों ने की है, वही **'भारतीय सिधान्त ज्योतिष'** कहलाता है।

काल की इकाईयाँ – भारतीय ज्योतिष के 'सिधान्त' स्कन्ध के अन्तर्गत काल की महत्वपूर्ण इकाइयों का वर्णन प्राप्त होता है। **फत्रुट्यादिप्रलयान्तकाल कलनामानप्रभेदः क्रमात्य।**[7] सिधान्त ग्रंथों के अन्तर्गत फ्सूर्य सिधान्तय् में 'काल की समस्त इकाइयों' का वर्णन हमें प्राप्त होता है जिसमें कलनात्मक काल की सूक्ष्म से सूक्ष्म इकाई 'त्रुटि' तथा काल की बृहत् इकाई 'ब्रह्मा की परमायु' है। यहीं पर वख्णत काल का एक रूप है **फ्महाकालय** जो न तो कलनात्मक है न ही प्रयोग में लाया जाता है किन्तु इस काल का अस्तित्व है। काल की प्रमुख इकाइयों का परिचय इस प्रकार है –

फ्लोकानामन्तकृत् कालः कालो{न्यः कलनात्मकः।
सा द्विध स्थूलसूक्ष्मत्वान्मूर्तश्चामूर्त उच्यते।।
प्राणादिः कथितो मूर्तस्त्रुटयाद्यो{मूर्त संज्ञकः।[8]

अर्थात् काल के सर्वप्रथम दो भेद किए जाते हैं –

(1) लोकों का अन्त करने वाला काल = महाकाल, (2) कलनात्मक काल।

कलनात्मक काल भी द्विविध हैं –

(1) त्रुटि आदि 'अमूर्त काल', (2) प्राणादि 'मूर्त काल'

त्रुटि आदि काल का मान अत्यंत सूक्ष्म होता है जो लोकव्यवहार में प्रयुक्त नहीं किया जाता इसलिए इसे 'अमूर्त काल' कहते हैं।[9]

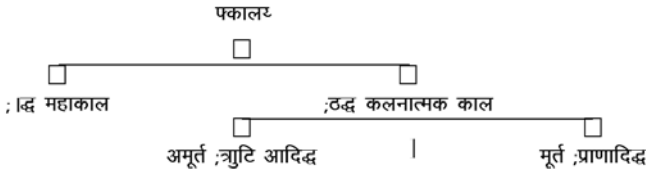

(A) फ्महाकालय – मैत्रयु उपनिषद् में काल को दो अर्थों में प्रयुक्त किया गया है – (1) ब्रह्म के स्वरूप से संबंधित काल (2) सूर्य की गतियों से संबंधित काल।[10] ब्रह्म के स्वरूप से संबंधित काल 'महाकाल' कहलाता है। महाकाल 'पूर्ण अहं' व 'इदं सृष्टि' से संबंधित है। जहाँ पूर्ण अहं चैतन्य स्वरूप, अखण्ड, महाप्रकाश, पराशक्ति का सम्मिलित रूप है जिसे अक्षर ब्रह्म कहा जाता है। यह 'सूत्रोमणि गणा इव' की तरह अकार से हकार तक प्रसृत है। जिस प्रकार विभिन्न पुष्पों के मध्य सूत्रा एक ही रहता है और माला तैयार होती है उसी प्रकार ब्रह्म एक ही रहता है और समस्त सृष्टि उससे बंधी रहती है। इस पूर्ण अहं में इदं नहीं होता। 'इदंता' स्वातन्त्रय से सृष्टि की उन्मुख अवस्था में आविर्भूत होती है। तथा 'इदंता' के स्पुफरण के पहले सर्वप्रथम परमाकाश का आविर्भाव होता है इसी को 'इदं सृष्टि' कहा जाता है। इदं सृष्टि या परमाकाश 'महासमष्टि' रूप है और इसे महासृष्टि कहा जाता है। इस महासृष्टि में फ्जगत्, लोक–लोकान्तर', भूत–भविष्यत्, सभी नित्य वर्तमान रूप में उस महासृष्टि में विद्यमान है। उस स्थान में काल नहीं है, क्योंकि काल परिणाम का साध्क है। जो लोगों के सम्मुख अतीत, अनागत, वर्तमान रूप में प्रकट होता है। उस भूमि ;परमाकाश, महासृष्टिद्ध में कलनात्मक काल का कोई अस्तित्व नहीं है। तांत्रिाकगण इसे ही फ्महाकालय कहते हैं।[11] महासृष्टि जिस प्रकार समग्र सृष्टि के अंतर्गत विस्तृत सत्ता की समष्टि है, उसी प्रकार 'महासंहार' भी समग्र विश्व का उपसंहार है। महासंहार के पश्चात् विश्व नहीं रहता, पूर्ण महासंहार होने पर 'इदं' रूप में प्रतीयमान सत्ता का अस्तित्व होना संभव नहीं है। उस समय परिपूर्ण 'अहं' ही रहता है। इस प्रकार महासृष्टि व महासंहार ब्रह्म के स्वरूप से संबंधित काल 'महाकाल' है। इसके अंतर्गत अतीत, अनागत, वर्तमान रूप में प्रकट होने वाले का का कोई अस्तित्व नहीं है। यह महाकाल नित्य रूपी ब्रह्म को अपनी भीतर समाहित करता है या ब्रह्म से संबंधित है।

(B) कलनात्मक काल

(C) अमूर्त काल की प्रमुख इकाई

(1) त्रुटि = फ्सूच्याभिन्ने पद्मपत्रो त्रुटिरित्यभिधीयतेय।
(2) 60 त्रुटि = 1 रेणु
(3) 60 रेणु = 1 लव
(4) 60 लव = 1 लीक्षक

(D) मूर्त काल

(1) प्राण = 10 दीर्घाक्षर उच्चारण का समय
(2) 60 प्राण = विपल
(3) 60 विपल = विनाड़ी / पल
(4) 60 पल = नाड़ी
(5) 60 नाड़ी = अहोरात्रा ;नाक्षत्राद्ध
(6) 30 अहोरात्रा = 1 मास
(7) 12 मास = 1 वर्ष
(8) 5 वर्ष = 1 युग[12]

सूर्यसिधान्त के अंतर्गत मास तीन प्रकार के थे – (1) चान्द्रमास, (2) सावनमास, (3) सौरमास।

इन्हीं के आधर पर वर्ष भी तीन प्रकार के थे – (1) चान्द्र वर्ष (2) सावन वर्ष (3) सौर वर्ष।

प्रत्येक वर्ष में दिनों की संख्या भिन्न–भिन्न थी। इनकी भिन्नता को दूर करने के लिए तथा वर्ष के मान में एकरूपता लाने के लिए 'अध्मिास' रूपी एक मास और जोड़ दिया जाता था जो पांच वर्षों के भीतर दो बार आता था यह पधति महाभारत में भी वख्णत है। यथा –

फ्तेषां कालातिरेकेण ज्योतिषां तु व्यतिक्रमात्।
पंचमे पंचमे वर्षे द्वौ मासावुपजायतः।।
एषामभ्यध्का मासाः पंच च द्वादश् क्षपाः।
त्रायोदशानां वर्षाणामिति मे वर्तते मतिः।।[13]

(x) मूर्त काल की महत् इकाई

(1) महायुग = सत्, द्वापर, त्रोता, कलयुग।
(2) मन्वन्तर = 71 महायुग का मान।
(3) कल्प = 14 मन्वन्तर + एक संध् का मान।
(4) ब्रह्मा का अहोरात्रा = 2 कल्प का मान।
(5) ब्रह्मा की परमायु = 100 वर्ष।

काल के भेद – काल की सूक्ष्म से बृहत्तर इकाइयों के मान को लोकव्यवहार में प्रयोग करने के लिए विद्वानों ने इन्हें मूर्त व अमूर्त रूप में विभक्त किया। तत्पश्चात् मूर्त रूप में भी काल की इकाइयों का मान अध्कि होने पर, फ्यथा – प्राण, विनाड़ी, नाड़ी, पल, अहोरात्रा, मास, वर्ष, युग, महायुग, मनु, कल्प, ब्रह्ममानय इन्हें फ्नौ प्रकारय के काल मानों में विभक्त किया गया। जहाँ पुनः मास त्रिविध् हुए – सावन, सौर, चान्द्र। इन्हीं के आधर पर वर्ष भी त्रिविध् हुए– सावन वर्ष, सौर वर्ष, चान्द्र वर्ष, युग 'पंचवर्षात्मक है' तो महायुग चतुख्वध् – सत्युग, द्वापर युग, त्रोता युग, कलयुग। इन विविध्ता को क्रमिक रूप देने के लिए तथा काल को लोकव्यवहार में प्रयुक्त करने के लिए ही वैदिक)षि व ज्योतिषज्ञों ने इन्हें नौ भागों में बांटा है।

सूर्यसिधान्तानुसर –**फ्ब्राह्मं दिव्यं तथा पित्रयं प्राजापत्यं च गौरवम्।**

सौर×च सावनं चान्द्रमार्क्षं मानानि वै नव।।
चतुख्भर्व्यवहारो{त्रा सौरचान्द्रार्क्ष सावनैः।
बार्हस्पत्येन षष्टयब्दं ज्ञेयं नार्न्यैस्तु नित्यशः।।[14]

नारद संहितानुसार– **फ्ब्राह्मं दैवं मानुषं च पित्रयं सौरं च सावनं।**

चान्द्रमार्क्षं गुरोर्मानमिति मानानि वै नव।।
एषां तु नवमानानां व्यवहारो{त्रा प×चभिः।
तेषां पृथव्फ पृथव्फ कार्यं वक्ष्यते व्यवहारतः।।[15]

अर्थात् ब्राह्म, दिव्य, पित्रय, प्राजापत्य, गौरव ;गुरू संबंधी बार्हस्पत्यद्ध सौर, सावन, चान्द्र तथा नाक्षत्रा ये नौ प्रकार के कालमान कहे गए हैं। सूर्य सिधान्त के अनुसार फ्सौर, चान्द्र, नाक्षत्रा, सावनय इन चार मानों का भूलोक में व्यवहार होता है। जबकि ब्राह्म, पित्रय, दिव्य व प्राजापत्य कानों की नित्य आवश्यकता नहीं पड़ती। साठ संवत्सरों की बार्हस्पत्य मान से गणना की जाती है। प्रस्तुत है नौ प्रकार के काल मानों का संक्षिप्त परिचय –

I. नाक्षत्रा मान– फ्षड्भिः प्राणैः विनाडीस्यात्तत्ष्टया नाडिका स्मृता। नाडीषष्टया तु नाक्षत्रामहोरात्रां प्रकीख्तम।। तत् त्रिाशता भवेन्मासः।[16]

अर्थात् 60 नाड़ी का समूह एक 'नाक्षत्रा अहोरात्रा' कहलाता है। और तीस नाक्षत्रा अहोरात्रा का समूह फ्नाक्षत्रा मासय कहलाता है। **फ्भचक्रगतिरार्क्षं,** नक्षत्राोदय से नक्षत्राोदय कालमान को 'नाक्षत्रामान' कहते हैं। नारदसंहिता में कहा गया है कि – जब चन्द्रमा 'अश्विनी, भरणी, कृत्तिका आदि 27 नक्षत्रों में क्रम से भोग करता है तो उसे

'नाक्षत्रामास' कहा जाता है। जितने काल में नक्षत्रा मण्डल का एक चक्र भ्रमण पूर्ण होता है उतना काल 'नाक्षत्रा दिन' कहलाता है। पूख्रणमा के दिन चन्द्रमा का जिस नक्षत्रा से योग होता है उसी नक्षत्रा के नाम से उस मास के नाम की संज्ञा होती है। कृत्तिका आदि दो दो नक्षत्रों के संयोग से काख्रतक आदि मास, अन्तिम उपान्तिम और पांचवां मास तीन–तीन नक्षत्रों के योग से होता है। यथा कृत्तिका या रोहिणी पूख्रणमा को हो तो काख्रतक, मृगशीर्ष या आर्द्रा से मार्गशीर्ष आदि मास होते हैं। अन्तिम ;काख्रतकादि की गणना सेद्ध आश्विन, उपान्तिम भाद्रापद तथा प×चम पफाल्गुन मास तीन तीन नक्षत्रों से युक्त होता है। यथा– पूर्वापफाल्गुनी, उत्तरा पफाल्गुनी, हस्त इन तीन नक्षत्रों से पफाल्गुन मास होता है। वर्तमान समय में भी यही पधति प्रयोग की जाती है। यथा–

नक्षत्रा	**पर्वान्त**	**मास**
कृत्तिका, रोहिणी	पूख्रणमा	काख्रत्तक
मृगशीर्ष, आर्द्रा	पूख्रणमा	मार्गशीर्ष
पुनर्वसु, पुष्य	पूख्रणमा	पौष
आश्लेषा, मघा	पूख्रणमा	माघ
पूर्वा पफाल्गुनी, उत्तरापफालगुनी, हस्त	पूख्रणमा	पफाल्गुन
चित्राा, स्वाती	पूख्रणमा	चैत्रा
विशाखा, अनुराध	पूख्रणमा	वैशाख
ज्येष्ठा, मूल	पूख्रणमा	ज्येष्ठ
पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा	पूख्रणमा	आषाढ़
श्रावण, धनिष्ठा	पूख्रणमा	श्रावण
शतभिषा, पूर्वा भाद्रपद, उत्तरा भाद्रपद	पूख्रणमा	भाद्रपद
रेवती, अश्विनी, भरणी	पूख्रणमा	आश्विन

नाक्षत्रामास की संख्या 12 होती है, इन बाहर मासों का समूह प्फनाक्षत्रा वर्षय् कहलाता है, इस नाक्षत्रा वर्ष में दिनों की संख्या '324' होती है। यह 'नाक्षत्रामान' सदैव समान रहता हैऋ यह मान घटता या बढ़ता नहीं है। इसलिए 'ज्योतिषशास्त्रा' व 'धर्मशास्त्रा' में इस काल मान का प्रयोग 'व्रतबन्धदि तिथि, वर्षादि निर्णय' में प्रयोग किया जाता है। **प्फप्रवर्षणं मेघगर्भो नाक्षत्रोण प्रगृह्यते**।[18]

ÛÛ सावनमान – सूर्य सिधान्त के अनुसार **प्फसावनोर्{र्को{र्कोदयैस्तथाय्** अर्थात् दो सूर्योदय के मध्य का काल 'सावन दिन' कहलाता है। 'काल माध्व' के अनुसार– **प्फसावनशब्दो{होरात्रोपलक्षकः सोमयागो सवनत्रायस्याहोरात्रासम्पाद्यत्वात्** सावन की संज्ञा यज्ञों के संबंध से उत्पन्न हुई है। सोमयाग में एक अहोरात्रा में सोम के तीन सावन होते हैं। तथा अहोरात्रा में होने वाले एक सोमयाग को वेद में 'अहः' कहा जाता है। और छः अहो का समूह 'षड्' कहलाता है। '5 षड् का समूह मास कहलाता है। इस प्रकार सावन वर्ष में दिनों की संख्या '360' होती है। माध्वाचार्यानुसार – **प्फअहोरात्रासाध्य एकः सोमयागो वैदेष्वहः शब्देनाभिधियते तादृशानामहख्रवशेषाणां गणः षडहः ... षडहेन प×चकेन एको मासः सम्पद्यते तादृशैर्द्वादशभिर्मासैः साध्यं संवत्सरसत्राम्** ।ऋ[19]

भास्कराचार्य ने सिधान्त शिरोमणि में उद्धृत किया है – **प्फअहर्गणो मध्यम सावनेन कृत श्चलत्वात् स्पुफटसावनस्य**।य् सावन दिनों के अनुसार ही यज्ञ क्रियाएँ सम्पन्न की जाती हैं तथा जन्माशौच तथा मृताशौच, चिकित्सा कार्य, चान्द्रायण व्रतादि का निर्णय 'सावन मान' से किया जाता है। और दिनपति, मासपति एवं वर्षपति भी ज्योतिष शास्त्रा में 'सावन दिनों' से ही ग्रहण किए जाते हैं। ज्योतिष शास्त्रा में 'ग्रहों की दैनिक मध्यम गति' सावन मान से ही ग्रहण की जाती है इसलिए सावन मान से मध्यम गति बताने के कारण 'सावन भी मध्यम' होता है। आचार्यों ने स्पष्ट गति का निषेध किया है क्योंकि सूर्य ग्रहों की स्पष्ट गति हर दिन अलग–अलग होती है, जिससे कल्प एवं युग तथा अहर्गण के सावन कहे गए मान अनुपयुक्त होंगे इसलिए – भास्कराचार्य कहते हैं – प्फअहर्गण का साध्न मध्यम सावन मानसे ही किया जाता है क्योंकि स्पष्ट सावन तो चल होता है। अतः सावन को मध्यम ही मानना चाहिए।य् प्फसावन मानसे कल्प, युग तथा अहर्गण में सावन दिन मध्यमाध्किार में कहे गए होते हैं।य्

III. चान्द्रमान – प्फत्त् ¯त्राशता भवेन्मासः सावनो{र्कोदयैस्तथात्रऋ ऐन्दवस्तिथिभिस्तद्वत्य्।[20] अर्थात् जिस प्रकार दो सूर्योदय के मध्य का काल 'सावन दिन' होता है उसी प्रकार दो चन्द्रोदय के मध्य का काल प्फचान्द्र दिनय् कहलाता है। चन्द्रमा आकाश में भ्रमण करते हुए जब सूर्य से युति करता है तब अमावस्या होती है। अमावस्या पर सूर्य व पृथ्वी के बीच में चन्द्रमा आता है जिससे चंद्रमा का अर्ध भाग पूर्ण रूप से छाया में रहता है तो वहीं पूख्रणमा के दिन सूर्य का पूर्ण प्रकाश चन्द्रमा पर पड़ता है और यह प्रकाश रात्रि में पृथ्वी पर परावख्रतत होता है –

सूर्य चन्द्र पृथ्वी

'अमावस्या'

सूर्य पृथ्वी चन्द्र

'पूख्रणमा'

प्फअर्कात् विनिस्सृतः प्राचीं यद्यात्यहरहः शशी।
तच्चान्द्रमानमंशैस्तु ज्ञेया द्वादशाभिस्तिथिः।।ऋ[21]

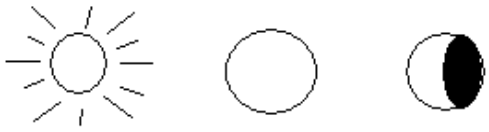

चन्द्रमा अमान्तकाल के समय सूर्य एवं चन्द्रमा के सर्घैं को ही दर्श ;अमावस्याद्ध कहते हैं, इस परिभाषा से सूर्य एवं चन्द्रमा राú/अंú/कú/विú में सब तरह से समान होने से 'योग' करता है। वहाँ से अपनी तेज गति से चलता हुआ चन्द्रमा प्रतिदिन अपनी अध्कि गति होने के कारण से जितना उस योग ¯बदु से पूर्व की ओर जाता है। उतना ही चान्द्रमान जानना चाहिए। अर्थात् सूर्य एवं चन्द्र का दैनिक अन्तर ही प्फदैनिक चांद्रमानय् है। इस प्रमाण की पुष्टि में कहा गया है – सूर्य एवं चन्द्रमा की गतियों में 12 अंश के अंतर होने पर 1 तिथि होती है। उसे ही 'चान्द्र दिन' जानना चाहिए। एक अमान्त से दूसरे अमान्त का मान 360° है। $360^\circ \div 30^\circ = 12^\circ$ की प्राप्ति होती है। एक चान्द्रमास में दो पक्ष होते हैं। $360^\circ/2 = 180^\circ$। जिन्हें शुक्लपक्ष व कृष्ण पक्ष कहा जाता है। प्रत्येक पक्ष का मान 180° है। यथा – अमावस्या के पश्चात् चन्द्रमा 12°–12° आगे चलता हुआ क्रमशः –

12°पर – प्रतिपदा	72° पर – षष्ठी	132°पर – एकादशी
24° पर – द्वितीया	84° पर – सप्तमी	144° पर – द्वादशी
36° पर – तृतीया	96° पर – अष्टमी	156° पर – त्रयोदशी
48° पर – चतुर्थी	108° पर – नवमी	168° पर – चतुर्दशी
60° पर – पंचमी	120°पर – दशमी	180°पर–पूख्रणमा आदि

तिथियाँ होती हैं पुनः इन्हीं तिथियों का क्रम 'अमावस्या' को पूर्ण होता है। जिससे एक 'चान्द्रमास' पूर्ण होता है। यहाँ हम यह कह सकते हैं कि 'नाक्षत्रामान' पूख्रणमान्त पर आधरित है तो वहीं 'चान्द्रमान' अमान्त अर्थात् अमावस्या पर आधरित है। अतः चन्द्रमा से

संबंध्ति चान्द्रमान का प्रयोग – पर्वनिर्णय, गृह निर्माण, व्रतोपवासादि निर्णय करने में किया जाता है। **फ्पर्ववास्तूपवासादि कृत्स्नं चान्द्रेण गृहयतेय्।**[22]

IV. पितृमान–फ्अहोरात्रां पितृणां तु विध्ुपृष्ठनिवासिनाम्। ¯त्राशत्रिाथ्यात्मकं प्रोक्तं चान्द्रमाससमं बुध्ैः।य्[23]

अर्थात् 30 तिथि ;1 चान्द्रमासद्ध तुल्य चन्द्रलोकवासी पितरों एक 'अहोरात्रा' ;दिन, रातद्ध होता है। 'अमावस्या' को पितरों की मध्यरात्रि होती है और 'पूख्रणमा' का दिन पितरों का दिनार्ध् होता है।

फ¯त्राशतातिथिभिश्चान्द्रः पित्रयमहः स्मृतम्।
निशा च मास पक्षान्तौ तयोर्मध्ये विभागतः।।य्[24]

चन्द्रमा की तीस तिथियों का समूह 'एक चान्द्र मास' कहलाता है। यह चान्द्रमास दो भागों में विभक्त है – 15 दिन का शुक्ल पक्ष व 15 दिन का कृष्ण पक्ष। पितरों का निवास स्थान फ्चन्द्रलोक माना जाता हैय्। ज्योतिष मर्मज्ञ व वैदिक)षि पितरों के अहोरात्रा की गणना भूलोकवासियों के चान्द्रमान से करते हैं। यथा – फ्एक अमान्त मास से दो अमान्त का काल चान्द्रमास है वही पितरों का 'एक अहोरात्रा' है। अहोरात्रा अर्थात् दिन व रात्रि। कृष्ण पक्ष ;15÷2द्ध7) तिथि से पितरों का दिन प्रारंभ होता है। शुक्ल पक्ष की ;15÷2द्ध7) तिथि में दिन की समाप्ति होती है और रात्रि का प्रारंभ होता है।य् लोक–व्यवहार में इस मान का कोई प्रयोग नहीं होता।

V. **सौर मान – फ्संक्रान्त्या सौर उच्यतेय्।**[25] सूर्य के चारों ओर के पृथ्वी के पथ को क्रांतिवृत्त ;म्बसपचजपबद्ध कहा जाता है। ;चित्रा संú 2द्ध यह विषुवत् वृत्त से 23.5° के कोण पर झुका है। जैसे–जैसे पृथ्वी अपनी कक्षा में गति करती है तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे 'तारों की पृष्ठभूमि में सूर्य विपरीत दिशा में गति कर रहा है'। उसी प्रकार जैसे रेल में सपफर करता यात्राी मार्ग में आने वाली समस्त वस्तुओं को विपरीत दिशा में भागता हुआ मानता है। सूर्य सिधान्तानुसार सूर्य जिस मार्ग पर गति करता हुआ प्रतीत होता है उसे क्रांतिवृत्त कहा जाता है। क्रांति वृत्त के दोनों पार्श्वों पर खगोलज्ञों ने एक 8° चौड़े क्षेत्रा को परिभाषित किया है जिसे 'राशि' कहते हैं। या क्रांतिवृत्त को ही 12 भागों में विभाजित किया गया जिसे 'राशि' कहते हैं। एक राशि का मान 30° होता है। सूर्य जब 1/30° का भोग कर लेता है तो उसे फ्सौर दिनय् कहा जाता है तथा सूर्य के केन्द्र का एक राशि से दूसरी राशि में जाना फ्सौर मासय् कहलाता है। और सूर्य जब संपूर्ण 12 राशियों का भोग कर लेता है तो उसे फ्सौर वर्षय् कहा जाता है। सौर वर्ष में 360 दिन होते हैं।

फ्सौरेण द्यु निशोर्मानं षडशीतिमुखानि च।
अयनं विषुवच्चैवं संक्रान्तेः पुण्यकालता।।य्[26]

अर्थात् दिन एवं रात्रि का मान, सूर्य संक्रान्तियों की षडशीत्याननादि संज्ञायें, उत्तरायण एवं दक्षिणायण, सायन मेष एवं सायन तुला का विषुवदिन ;जिस दिन दिनमान 30 घटी एवं रात्रिमान 30 घटी हो ऐसी स्थिति 23 सितम्बर एवं 21 मार्च को आती है, को विषुव दिन कहते हैंद्ध, तथा संक्रांतियों का पुण्यकाल ये सभी सूर्य के राश्यादि भोगने से ही जानने चाहिए। इसका आशय यह है कि – ये सभी सूर्य के चलने से ही सिध होते हैं।

VII. **दैवमान** – सूर्य द्वारा क्रांतिवृत्त का संपूर्ण भोग फ्सौर वर्षय् कहलाता है। मानवों का यह सौर वर्ष देवताओं का फ्एक दिव्य दिनय् है। **फ्मासैर्द्वादशभिर्वर्षं दिव्यं तदह उच्यते।य्**[27] 360 दिव्यदिनों का मान फ्दिव्य वर्षय् है। इस प्रकार '360 सौर वर्ष' देवताओं का 'एक दिव्य वर्ष' होता है। आकाश में सूर्य का दिखाई देना 'दिन' है और आकाश में सूर्य का दिखाई न देना 'रात्रि'। देव भाग में ख स्वस्तिक से 60 अंश की त्रिाज्या लेकर जो वृत्त बनाते हैं वह क्षितिज वृत्त 'नाड़ी वृत्त' कहलाता है। उससे उत्तरी भाग में सायन सूर्य के मेषादि 6 राशियों के अहोरात्रा वृत्तों में घूमने से, देवताओं के क्षितिज से उफपर होने से सूर्य दिखाई देने से दिन होता है, एवं तुलादि 6 राशियों के अहोरात्रा में सायन सूर्य के भ्रमण से नाडीवृत्त के दक्षिण में होने के कारण देवताओं के क्षितिज से नीचे होने के कारण सूर्य नहीं दिखाई देता जिससे उनकी ;देवताओं कीद्ध रात्रि होती है। जबकि सायन तुलादि 6 राशियों के अहोरात्रा वृत्तों में सूर्य के भ्रमण के कारण राक्षसों के भाग में सूर्य के क्षितिज से उफपर होने से, दिखाई देने के कारण राक्षसों का 6 महीनों का दिन होता है। मेषादि 6 राशियों में सायन सूर्य की स्थिति के कारण उनके ;राक्षसों केद्ध क्षितिज से नीचे होने से सूर्य दर्शन नहीं होता इसलिए ये राक्षसों की रात्रि होती है।

फ्सुरासुराणामन्योर्{न्यमहोरात्रां विपर्ययात्।
तत्षष्टिः षड्गुणा दिव्यं वर्षमासुरमेव च।।य्[28]

अर्थात् देवताओं का निवास स्थान उत्तरी ध्ुव के नीचे पड़ने वाले प्रदेश में एवं राक्षसों का निवास स्थान दक्षिणी ध्ुव के नीचे पड़ने वाले प्रदेश में माना गया है। इसी कारण से दोनों के यहाँ दिन व रात्रि विपरीत क्रम से होते हैं।
इस दिव्य वर्ष का प्रयोग लोकव्यवहार में नहीं होता किन्तु यह 'दिव्य' मान काल की बड़ी इकाई फ्ब्रह्ममानय् को ज्ञात करने के लिए अति आवश्यक है।

VII. मनुमान

(I) **'महायुग'** – मनु संबंधे मान को ही मनुमान या प्राजपत्य मान कहते हैं। दिव्य वर्ष के प्रमाण से '12 हजार दिव्य वर्षों' का एक चतुर्युग कहा गया है। तथा – **फ्सूर्याब्दसघ्ख्यया द्वि त्रि सागरैरयुताहतैःय्।** सौर मान ;432द्ध से दस हजार गुणित 'एक महायुग' होता है।

432 ग 10000 त्र 4320000 सौर वर्ष = एक महायुग।

फ्सन्ध्यासंध्यांश सहितं विज्ञेयं तच्चतुर्युगम्।
कृतादीनां व्यवस्थेयं ध्र्मपाद व्यवस्थ्या।।
युगानां सप्ततिः सैका मन्वन्तरमिहोच्यते।
कृताब्दसघ्ख्यस्तस्यान्ते सन्ध्िः प्रोक्तो जलप्लवः।।
ससन्ध्यस्ते मनवः कल्पे ज्ञेयाश्चतुर्दश।
कृतप्रमाणः कल्पादौ संध्िप×चदश स्मृतः।।य्[29]

(d) **चारों युगों का मान** – महायुग के मान ;12000 दिव्य वर्षद्ध के दशमांश ;1200द्ध को क्रम से 4, 3, 2, 1 से गुणा करने पर कृत, त्रोता, द्वापर, कलियुग का मान होता है। कृतयुग, त्रोतायुग, द्वापरयुग, कलियुग की पाद ;1200 दिव्यद्ध व्यवस्था 'ध्र्मपाद' के अनुसार है। इसी के अनुरूप –

कृतयुग 4 पाद = 1200 दिव्य वर्ष ग 4	=	4800 दिव्य वर्ष
त्रोतायुग 3 पाद = 1200 दिव्य वर्ष ग 3	=	3600 दिव्य वर्ष
द्वापर युग 2 पाद = 1200 दिव्य वर्ष ग 2	=	2400 दिव्य वर्ष
कलियुग 1 पाद = 1200 दिव्य वर्ष ग 1	=	1200 दिव्य वर्ष
चारों युगों का योग	=	**12000 दिव्य वर्ष**

([k) संध्यिों का वर्णन

अपने अपने युगमान के षष्ठांश तुल्य दोनों संध्यिाँ ;प्रथम संध्ि, द्वितीय संध्द्धि होती है। यथा –

कृतयुग 4800 ग 1į6 त्र 800 दिव्य वर्ष संध्ि [1]400 प्रथम संध्ि + 400 द्वितीय संध्ि

त्रोतायुग 3600 ग 1į6 त्र 600 दिव्य वर्ष संध्ि [1]300 प्रथम संध्ि + 300 द्वितीय संध्ि

द्वापर युग 2400 ग 1⁄6 त्र 400 दिव्य वर्ष संध्ि [1]200 प्रथम संध्ि + 200 द्वितीय संध्ि्

कलियुग 1200 ग 1⁄6 त्र 200 दिव्य वर्ष संध्ि [1]100 वर्ष प्रथम संध्ि + 100 द्वितीय संध्ि्

;गद्ध संध्ि से रहित युग का मान

युग	दिव्य वर्षमान		
कृतयुग	4800–800	=	4000 दिव्य वर्ष
त्रोतायुग	3600–600	=	3000 दिव्य वर्ष
द्वापरयुग	2400–400	=	2000 दिव्य वर्ष
कलयुग	1200–200	=	1000 दिव्य वर्ष

2.'मन्वन्तर' फ्युगानां सप्ततिः सैका मन्वन्तरमिहोच्यते। कृताब्दसघ्ख्यस्तस्यान्ते संध्ि प्रोक्तो जलप्लवः।।ख्30

सूर्य सिन्धान्तानुसार 71 महायुगों का फ्एक मन्वन्तरय् होता है। और एक मनु की समाप्ति के बाद जब दूसरे मनु का प्रारंभ होता है तब दोनों के मध्य का काल 'जलप्लव' कहलाता है क्योंकि मनु की समाप्ति के पश्चात् प्रलयावस्था आती है जिससे समस्त सृष्टि जल के भीतर समाहित हो जाती है। यह जलप्लव काल 4800 दिव्य वर्षों तक रहता हैऋ और जलप्लव के पश्चात् पुनः दूसरा मनु प्रारंभ होता है।

3. **कल्प** – एक कल्प में संध्ि काल के साथ 14 मनु होते हैं, अर्थात् कल्प के आदि में कृतयुग ;4800द्ध तुल्य संध्ि होती है। इस प्रकार एक कल्प में 14 मनु और 15 संध्ियाँ होती हैं। फ्एक कल्प = 14 मनु + 15 संध्ि। इस प्रकार मनुमान के अंतर्गत महायुगमान व मन्वन्तर, कल्प का विवेचन प्राप्त होता है। चारों युगों का मानव वर्ष मान इस प्रकार है–

युग	संध्या + नियतकाल + संध्यांश	सर्वयोग
कृतयुग	14000 + 1440000 + 14400 =	1728000
त्रोतायुग	108000 + 1080000 + 108000 =	1296000
द्वापरयुग	72000 + 720000 + 72000 =	864000
कलयुग	36000 + 360000 + 36000 =	432000
		4320000 मानव वर्ष

टप्ध्ध्ध ब्रह्ममान– फ्इत्यं युग सहड्डेण भूतसंहारकारकः। कल्पो ब्राह्ममहः प्रोक्तं शर्वरी तस्य तावती।।ख्31

मन्वन्तर व कल्प की गणना –

1. मन्वन्तर=71महायुग = 4320000 मानव वर्ष ग 71 = 306720000 मानव वर्ष।
2. मन्वन्तर का मान = 30670000 मानव वर्ष।
3. संध्या संध्यांश = 25920000 मानव वर्ष।
4. कल्प = 432000000 मानव वर्ष = 1000 महायुग = ब्रह्मा का दिन।

इस प्रकार एक हजार महायुग फ्एक कल्पय् है। और यही ब्रह्मा का 'एक दिन' है। इसमें सभी प्राणियों का लय होता है, और एक कल्प ब्रह्मा की रात्रि होती है। दो कल्प ब्रह्मा का अहोरात्रा है। अहोरात्रा प्रमाण से 30 अहोरात्रा ब्रह्मा का एक मासऋ 12 मास का एक वर्षऋ 100 वर्ष ब्रह्मा की परमायु है। ब्रह्मा की आयु का मान इस प्रकार है –

ब्रह्मा का एक पल = 2400000 मानव वर्ष।
ब्रह्मा की एक घटी = 144000000 मानव वर्ष।
ब्रह्मा का एक दिन = 4320000000 मानव वर्ष।
ब्रह्मा का अहोरात्रा = 8340000000 मानव वर्ष।
ब्रह्मा का एक मास = 259200000000 मानव वर्ष।
ब्रह्मा का एक वर्ष = 3110400000000 मानव वर्ष।
विष्णु का कालमान = 18662400000000000000 मानव वर्ष।
शिव का कालमान = 447897600000000000000000000 मानव वर्ष।

प्ण बार्हस्पत्यमान – जन्मकुण्डली के प्रारंभ में संवत्सर का वर्णन होता है तथा पंचागों में संवत्सर वर्ष का संकेत दिया जाता है किन्तु ज्योतिष सिधान्त में बार्हस्पत्य मान में विविध्ता पाई जाती है। यथा –

फ्मध्यगत्या भभोगेन गुरोगौर्रववत्सरः।
आश्विनादिक संज्ञा श्च ज्ञेया मेषादिराशिषु।।ख्32

तथा

फ्वैशाखादिषु कृष्णे च योगात् प×चदशे तिथौ।
काख्रतकादीनि वर्षाणि गुरोरस्तोदयात् तथा।ख्33

मध्यम गति से एक एक राशि का भोग बार्हस्पत्य वर्ष कहलाता है। मेषादि 12 राशियों में आश्विन, काख्रतक इत्यादि मासवत् 12 संज्ञा होती है। नाक्षत्रामान 'पूर्वान्तय् से संबंध्ति है। जबकि बार्हस्पत्यमान 'अमान्त' से। वैशाख मास की पूख्रणमा को विशाखा नक्षत्रा होता है यह नाक्षत्रा मास से संबंध्ति है। फ्वैशाख आदि मासों में कृष्णपक्ष की 15वीं ;अमावस्याद्ध तिथि को कृत्तिका आदि नक्षत्रों के योग से बार्हस्पत्य काख्रतकादि मास होते हैं। इस विध्ि से 'जिस मास में गुरु अस्त या उदय होगा उस मास से संबंध्ति बृहस्पति का वर्ष प्रारंभ होता है। वर्तमान समय में इस विध्ि मान का उपयोग नहीं होता किंतु पंचागों में वख्रणत 'संवत्सर' का उल्लेख प्राप्त होता है। जो बार्हस्पत्य मान से संबंध्ति है। एक संवत्सर एक वर्ष का होता है। संहिता स्कन्ध के विद्वान गुरु की मध्यम राशि के भोग काल को संवत्सर कहते हैं। यह काल भी एक वर्ष का होता है। इसका प्रयोग 'यज्ञ क्रिया की संकल्प विध्ि में होता है। यह प्रभवादि संवत्सर जानने की विध्ि दो प्रकार की होती है। यथा – प्रथम विधि –

फ्संवत्कालस्त्वघड्डयुतः कृत्वा शून्यरसैर्हृतः।
शेषः संवत्सरो ज्ञेयः प्रभवादिर्बुध्ैः क्रमात्।ख्34

अर्थात् विक्रम संवत् में 9 जोड़कर 60 से भाग दें। शेष में एक जोड़ने पर प्रभवादि संवत्सर होगा।

दूसरी विधि – गुरु भगण संख्या ;सिधान्त ग्रंथ में वख्रणतद्ध को 12 से गुणा करें और उसमें गुरु की वर्तमान राशि ;पंचाग में वख्रणतद्ध जोड़ दें। प्राप्त लध्ि को 60 से भाग दें। जो शेष बचेगा वही विजयादि संवत्सर क्रम से होगा। ये बृहस्पति के मध्यमान से संबंध्ति 60 संवत्सर संकल्पविध्ि में प्रयुक्त किए गए हैं। प्रभव, विभव, शुक्ल, प्रमोद आदि 60 संवत्सर क्रम से होता है। इनका प्रयोग वर्तमान समय में भी होता है। जिन्हें पंचागों में प्राप्त किया जा सकता है। प्रभवादि 60 संवत्सर इस प्रकार हैं –

1. प्रभव	2. विभव	3. शुक्ल	4. प्रमोद	5. प्रजापति
6. अंगिरा	7. श्रीमुख	8. भाव	9. युवा	10. धता
11. ईश्वर	12. बहुधन्यक	13. प्रमाथी	14. विक्रम	15. वृष
16. चित्राभानु	17. सुभानु	18. तारण	19. पार्थव	20. व्यय
21. सर्वजित	22. सर्वधरी	23. विरोधी	24. विकृति	25. खर
26. नन्दन	27. विजय	28. जय	29. मन्मथ	30. दुर्मुख
31. हेमलम्बी	32. विलम्बी	33. विकारी	34. शर्वरी	35. प्लव
36. शुभकृत	37. शोभन	38. क्रोधी	39. विश्वावसु	40. प्रभाव
41. प्लवंग	42. कीलक	43. सौम्य	44. साधरण	45. विरोध्कृत
46. परिधिवी	47. प्रमादी	48. आनन्द	49. राक्षस	50. नव
51. पिंगल	52. कालयवफ	53. सिधार्थ	54. रूद्र	55. दुर्मति
56. दुन्दुभि	57. रूध्रिोदगारी	58. रक्ताक्षी	59. क्रोध्न	60. क्षय

इस प्रकार ब्राह्म, दिव्य, पित्रय, प्राजापत्य, गौरव, सौर, सावन, चान्द्र, नाक्षत्रा नव विध् काल मानों की विविध्ता दृष्टिगोचर होती है। लोकव्यवहार में प्रयुक्त व अप्रयुक्त काल–मानों को 'भारतीय ज्योतिष का सिधान्त स्कन्ध' व्याख्यायित करता है।

सन्दर्भ सूची

1.)ग्वेद ;10/71/11द्ध

2. मुण्डकोपनिषद्, 1/14–15
3. द्योतते प्रकाशते तत् ज्योतिः अग्नि सूर्यादिकंवा। राजाराधकान्त देव, शब्दकल्पद्रुम, चौखम्बा ग्रंथमाला, द्वितीयकाण्ड, पृ॰ 550
4. शास्त्री, नेमिचंद्र – भारतीय ज्योतिष, भारतीय ज्ञानपीठ, 2006, पृ॰ 18
5. वही॰
6. कद्ध सिधान्तसंहिताहोरारूपं स्कन्ध्त्रायात्मकम्।
   वदेस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिः शास्त्रामनूत्तमम्।। नारद संहिता ;1/4द्ध
   पंचस्कन्धमिदं शास्त्रां होरागणित संहिता।
   केरलिः शकुनश्चेति ज्यौतिश्शास्त्रामुदीरितम्।। बृहत्संहिता
7. सिधान्त शिरोमणि, 1/6
8. सूर्य सिधान्त, 14/1–10
9. सूच्या भिन्ने पद्मपत्रो त्रुटिरित्यभिधियते
   तत्षष्ट्या च भवेद्रेणू रेणुषष्टया लवः स्मृतः।
   तत्षष्ट्या लीक्षकः प्रोक्तस्तत्षष्टया प्राण उच्यते।।
10. मैत्रयु उपनिषद्, 6/14–16
11. महाकालसंहिता ;कामकलाखण्डद्ध, म॰म॰ गोपीनाथ कविराज, भूमिका, पृ॰
12. वेदांग ज्योतिष में पांच वर्षों का समूह 'युग' कहलाता था, ¯कतु सूर्यसिधान्त में युगों का मान अलग–अलग दिया गया है तथा चार युगों को महायुग की संज्ञा दी गई है।
13. महाभारत विराट पर्व, अध्याय–52
14. सूर्यसिधान्त, 14/1–2
15. नारद संहिता, 3/1–2
16. सूर्यसिधान्त, 1/11–12
17. नारदसंहिता, 1
18. नारदसंहिता
19. कालमाध्वः
20. सू॰सि॰, 1/13
21. सू॰सि॰, 14/12
22. नारदसंहिता, 3/5
23. बृहज्ज्योतिसारः
24. सूर्यसिधान्त, 14/14
25. सूर्य सिधान्त, 1/13
26. सूर्य सिधान्त, 14/3
27. सूर्य सिधान्त, 1/14
28. सूर्य सिधान्त, 1/15
29. सूर्य सिधान्त, 1/17–19
30. सूर्य सिधान्त, 1/18
31. वही, 1/20
32. बृहज्ज्योतिःसारः
33. सूर्य सिधान्त, 14/17
34. भारतीय कुण्डली विज्ञान, भाग 1, पृ॰ 8